

# श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 59 — नरकासुर-वध

5 October 2026



सत्यभामा को साथ लिए गरुड़ पर आरुढ़ श्रीकृष्ण प्रागज्योतिषपुर के पर्वत, जल, अग्नि और वायु के दुर्गों को भेदकर नरकासुर का अन्त करते हैं और सोलह हज़ार बन्दिनी राजकुमारियों को मुक्त करते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस उनसठवें अध्याय में शुकदेव गोस्वामी राजा परीक्षित को सुनाते हैं कि भूमिपुत्र नरकासुर का अन्त कैसे हुआ, और भगवान ने बन्दिनी कन्याओं को छुड़ाकर उन्हें अपना कैसे बनाया।

## अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (उत्तरार्ध)
- अध्याय: 59

- अध्याय शीर्षक: नरकासुर-वध
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी; स्तुति में पृथ्वी देवी (भूमि)
- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: नरकासुर की दुर्ग-नगरी प्रागज्योतिषपुर; इन्द्र का स्वर्ग; द्वारका
- केंद्रीय विषय: मुर और नरकासुर का वध, भूमि की स्तुति, राजकुमारियों की मुक्ति, पारिजात-हरण और भगवान के विवाह
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 59, श्लोक 1-45
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

## पूर्व अध्याय का संदर्भ

अष्टावनवें अध्याय में श्रीकृष्ण ने कालिन्दी, मित्रविन्दा, सत्या, भद्रा और लक्ष्मणा से विवाह कर अपनी आठ प्रमुख पटरानियों को पूर्ण किया, और अध्याय इस उल्लेख के साथ समाप्त हुआ कि भौमासुर को मारकर उसके बन्दीगृह से छोड़ाई गई हज़ारों अन्य रानियाँ भी थीं।

## परीक्षित का प्रश्न

राजा परीक्षित ने शुकदेवजी से शार्ङ्गधन्वा श्रीकृष्ण के उस पराक्रम को सुनाने की प्रार्थना की — पृथ्वी से उत्पन्न भौमासुर का वध कैसे हुआ, और उसने इतनी स्त्रियों को बन्दी क्यों बनाया था? शुकदेवजी ने पूरा इतिहास सुनाया।

## इन्द्र की पुकार और प्रागज्योतिषपुर की ओर उड़ान

शिकायत स्वयं स्वर्ग से आई। भौम नाम से भी प्रसिद्ध नरकासुर वरुण का छत्र हर ले गया था, देवमाता अदिति के कुण्डल छीन चुका था, और मन्दराचल के रत्नमय शिखर मणिपर्वत पर, जहाँ देवता रहते थे, अधिकार कर बैठा था। इन्द्र ने ये अत्याचार श्रीकृष्ण के सामने रखे, और प्रभु तुरन्त गरुड़ पर आरूढ़ हुए, अपनी प्रिय सत्यभामा को साथ लिया और असुर की राजधानी प्रागज्योतिषपुर की ओर उड़ चले।

वह नगरी दुर्ग के भीतर दुर्ग थी — पर्वतों के प्राकार, शस्त्रों की मोर्चाबन्दी, जल, अग्नि और वायु की पेटियाँ, और नरकासुर के सहयोगी मुर के बिछाए दसियों हज़ार भयंकर फन्दे। श्रीकृष्ण किसी के सामने नहीं रुके।

गदया निर्बिभेदाद्रीन् शस्त्रदुर्गाणि सायकैः ।

चक्रेणाग्निं जलं वायुं मुरपाशांस्तथासिना ॥ ४ ॥

*gadayā nirbibhedādrīn śastra-durgāṇi sāyakaiḥ cakreṇāgniṁ jalaṁ vāyuṁ mura-pāśāṁs tathāsinā*

अर्थ: उन्होंने गदा से पर्वत-दुर्गों को, बाणों से शस्त्र-दुर्गों को, चक्र से अग्नि, जल और वायु के अवरोधों को तथा तलवार से मुर के पाशों को छिन्न-भिन्न कर दिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 59, श्लोक 4)



पर्वत-प्राकारों पर गदा, शस्त्र-दुर्गों पर बाण, अग्नि-जल-वायु पर सुदर्शन और मुर के पाशों पर तलवार — प्रभु एक ही झटके में प्रागज्योतिषपुर की हर रक्षा-पंक्ति तोड़ देते हैं।

फिर गदाधर ने अपना पाञ्चजन्य शंख बजाया। उसकी ध्वनि ने प्राकारों पर लगे यन्त्रों को उखाड़ फेंका और रक्षकों का साहस तोड़ दिया, और उनकी भारी कौमोदकी गदा ने नगर के परकोटे को ही ढहा दिया।

## पाँच सिरों वाले मुर का पतन

वह शंखनाद प्रलयकाल की गर्जना-सा भयानक था। उसे सुनकर खाई के जल में सोया पाँच सिरों वाला दैत्य मुर उठ खड़ा हुआ। प्रलयाग्नि-सा दहकता, त्रिशूल उठाए, वह सर्प की भाँति गरुड़ पर झपटा, मानो पाँच मुखों से तीनों लोकों को निगल जाएगा, और उसकी गर्जना ने धरती-आकाश भर दिया।

श्रीकृष्ण ने दो बाणों से उड़ते हुए त्रिशूल के तीन टुकड़े कर दिए, और बाणों से उसके मुखों पर प्रहार किया, और मुर की फेंकी गदा को अपनी गदा से हजार टुकड़ों में चूर कर दिया। जब वह दैत्य भुजाएँ उठाए दौड़ा, तो अजेय प्रभु ने खेल-ही-खेल में चक्र से उसके पाँचों सिर उतार लिए, और मुर उस पर्वत की तरह निष्प्राण होकर जल में गिरा जिसका शिखर इन्द्र के वज्र ने काट डाला हो।

## सात पुत्र और नरकासुर की सेना

पिता के वध से व्याकुल और प्रतिशोध से जलते मुर के सात पुत्रों को नरकासुर ने सेनापति पीठ के नेतृत्व में भेजा — ताम्र, अन्तरिक्ष, श्रवण, विभावसु, वसु, नभस्वान् और अरुण ने प्रभु पर शस्त्रों की वर्षा कर दी। अमोघ पराक्रमी श्रीकृष्ण ने उस शस्त्र-समूह को तिल-तिल काट डाला और पीठ तथा उसके साथियों को यमलोक भेज दिया।

अपने सेनापतियों को गिरते देख नरकासुर क्रोध में ऐरावत-वंश के समुद्रजात हाथियों की सेना लेकर निकला। सत्यभामा सहित गरुड़ पर विराजमान श्रीकृष्ण को सूर्य के ऊपर बिजली-युक्त मेघ की तरह देखकर उसने उन पर शतघ्नी शक्ति फेंकी, और उसके सब योद्धाओं ने एक साथ प्रहार किया। श्रीकृष्ण ने तीखे बाणों से उस सेना को तत्क्षण छिन्न-भिन्न कर दिया और शत्रुओं का हर अस्त्र काट गिराया। पंखों, चोंच और पंजों से प्रहार करते गरुड़ ने हाथियों को नगर में खदेड़ दिया, और नरकासुर अकेला लड़ता रहा।

## नरकासुर का वध

भूमिपुत्र ने गरुड़ पर वह शक्ति चलाई जिसने कभी इन्द्र के वज्र को लौटा दिया था; उससे बिंधकर भी गरुड़ उतना भी नहीं हिले जितना माला की चोट से हाथी। विफल होकर नरकासुर ने स्वयं श्रीकृष्ण पर प्रहार करने के लिए शूल उठाया।

शूलं भौमोऽच्युतं हन्तुमाददे वितथोद्यमः ।

तद्विसर्गात् पूर्वमेव नरकस्य शिरो हरिः ।

अपाहरद् गजस्थस्य चक्रेण क्षुरनेमिना ॥ २१ ॥

*śūlaṁ bhaumo 'cyutaṁ hantum ādade vitathodyamaḥ tad-visargāt pūrvam eva narakasya śīro hariḥ apāharad gaja-sthasya cakreṇa kṣura-neminā*

अर्थ: अपना उद्यम व्यर्थ होने पर भौम ने अच्युत को मारने के लिए शूल उठाया; किन्तु उसके छोड़ने से पहले ही श्रीहरि ने क्षुर-धार वाले चक्र से गज पर बैठे नरक का सिर उतार लिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 59, श्लोक 21)



नरकासुर के शूल छोड़ने से पहले ही क्षुर-धार चक्र गज की पीठ पर उसका अन्त कर देता है; ऋषि "साधु" कहते हैं और देवता मुकुन्द पर फूल बरसाते हैं।

धरती पर गिरा असुर का मस्तक, कुण्डलों और सुन्दर किरीट से विभूषित, अब भी देदीप्यमान था। उसके स्वजन “हाय!” कह उठे; ऋषियों ने “साधु!” कहा; और देवेश्वरों ने पुष्पवर्षा करते हुए मुक्तिदाता मुकुन्द की स्तुति की।

## पृथ्वी देवी कुण्डल अर्पित कर स्तुति करती हैं

अब नरकासुर की माता पृथ्वी देवी श्रीकृष्ण के सामने आई। उन्होंने शुद्ध स्वर्ण में जड़े रत्नों से दमकते अदिति के कुण्डल, वैजयन्ती सहित वनमाला, वरुण का छत्र और अपने पुत्र द्वारा छीना हुआ रत्नमय शिखर महामणि प्रभु के हाथों में सौंप दिया। फिर हाथ जोड़े, नतमस्तक और भक्ति में डूबे मन से उन्होंने उन विश्वेश्वर की स्तुति की जिनकी पूजा श्रेष्ठ देवता भी करते हैं।



भूमि अदिति के कुण्डल, वरुण का छत्र और रत्नमय शिखर लौटाती हैं, फिर प्रभु से प्रार्थना करती हैं कि वे अपना पापहारी हाथ उनके भयभीत पौत्र के सिर पर रखें।

उन्होंने प्रभु को देवों के देव, शंख-चक्र-गदाधारी और वह परमात्मा कहकर नमन किया जो भक्तों की इच्छा से दृश्य रूप धारण करते हैं, और उन्हें प्रणाम किया जिनकी नाभि, माला, नेत्र और चरण सब कमल हैं। उन्होंने उन्हें वासुदेव और विष्णु, आदिपुरुष और आदिबीज, पूर्ण ज्ञान; अनन्त शक्ति वाले अजन्मा स्रष्टा, पर और अपर के आत्मा, परमात्मा कहकर प्रणाम किया। वही सृष्टि के लिए रजोगुण, संहार के लिए तमोगुण और पालन के लिए सत्त्वगुण धारण करते हैं, फिर भी तीनों से अछूते रहते हैं; वही काल, प्रधान और पुरुष हैं, और इन सबसे परे भी। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश, इन्द्रियाँ और विषय, देवता, मन, अहंकार और महत्तत्त्व — यह सारा चराचर जगत् उन अद्वितीय प्रभु में केवल एक झिलमिलाता आभास है।

फिर वे नरकासुर के भयभीत पुत्र भगदत्त को प्रभु के चरणों में ले आईं।

तस्यात्मजोऽयं तव पादपङ्कजं भीतः प्रपन्नार्तिहरोपसादितः ।

तत् पालयैनं कुरु हस्तपङ्कजं शिरस्यमुष्याखिलकल्मषापहम् ॥ ३१ ॥

*tasyātmajo 'yaṁ tava pāda-paṅkajaṁ bhītaḥ prapannārti-haropasāditaḥ tat pālayainaṁ kuru hasta-paṅkajaṁ śirasy amuṣyākḥila-kalmaṣāpaham*

अर्थ: हे शरणागतों की पीड़ा हरने वाले! उसका यह पुत्र डरा हुआ आपके चरणकमलों में लाया गया है; अतः इसकी रक्षा कीजिए और समस्त पापों को मिटाने वाला अपना करकमल इसके सिर पर रखिए। (स्कन्ध 10, अध्याय 59, श्लोक 31)

भक्ति से झुकी पृथ्वी देवी की इस प्रार्थना पर प्रभु ने बालक को अभय प्रदान किया।

## मुक्त राजकुमारियों

इसके बाद श्रीकृष्ण सब प्रकार की सम्पदा से भरे भौमासुर के महल में प्रविष्ट हुए। वहाँ उन्होंने सोलह हज़ार (और परम्परा के अनुसार सौ और) राजकन्याओं को देखा, जिन्हें नरकासुर पृथ्वी के राजाओं से, और देवताओं, सिद्धों तथा असुरों तक से बलपूर्वक हर लाया था। नरश्रेष्ठ को अपने अन्तःपुर में आते देख वे कन्याएँ मोहित हो गईं, और हर एक ने मन-ही-मन उन्हें वह पति चुन लिया जिसे विधाता उसके द्वार तक ले आया था।

भूयात् पतिरयं मह्यं धाता तदनुमोदताम् ।

इति सर्वाः पृथक् कृष्णे भावेन हृदयं दधुः ॥ ३५ ॥

*bhūyāt patir ayaṁ mahyaṁ dhātā tad anumodatām iti sarvāḥ pṛthak kṛṣṇe bhāvena hṛdayaṁ dadhuḥ*

अर्थ: “यही मेरे पति हों, और विधाता इसका अनुमोदन करें” — ऐसा सोचकर उन सबने अलग-अलग अपना हृदय प्रेमभाव से श्रीकृष्ण में लगा दिया। (स्कन्ध 10, अध्याय 59, श्लोक 35)



स्नान कर नए वस्त्र पहने मुक्त कन्याएँ पालकियों में द्वारका के लिए निकलती हैं, साथ में कोष, रथ और ऐरावत-कुल के चौंसठ श्वेत हाथी।

प्रभु ने उन्हें स्नान कराकर निर्मल वस्त्र पहनवाए और पालकियों में द्वारका भेज दिया, साथ में विशाल कोष, रथ, घोड़े और प्रचुर धन, तथा ऐरावत-कुल के चौंसठ तेज़ चार दाँतों वाले श्वेत हाथी भी भेजे।

## पारिजात-वृक्ष और इन्द्र की विस्मृति

प्रागज्योतिषपुर से प्रभु इन्द्र के भवन गए। उन्होंने अदिति को उनके कुण्डल और इन्द्र को वरुण का छत्र लौटा दिया, और देवराज ने अपनी पत्नी शची सहित प्रभु और उनकी प्रिय पत्नी की पूजा की। फिर सत्यभामा के कहने पर श्रीकृष्ण ने इन्द्र के उद्यान से पारिजात-वृक्ष उखाड़ा, उसे गरुड़ की पीठ पर रखा, विरोध करने उठे इन्द्र और देवताओं को हराया, और उसे द्वारका ले आए।



सत्यभामा की इच्छा पर प्रभु इन्द्र के उद्यान से पारिजात उखाड़कर द्वारका ले जाते हैं; स्वर्ग के भ्रमर उसकी सुगन्ध के पीछे धरती तक चले आते हैं।

वह वृक्ष सत्यभामा के महल के उद्यान में लगाया गया, और उसकी सुगन्ध और मधु के लोभी स्वर्ग के भ्रमर उसके पीछे-पीछे धरती तक चले आए। यहाँ शुकदेवजी देवताओं के हृदय को खोलकर दिखाते हैं। थोड़ी ही देर पहले इन्द्र ने किरीट के अग्रभागों से श्रीकृष्ण के चरण छूकर सहायता माँगी थी; इच्छा पूरी होते ही उसी इन्द्र ने उनके विरुद्ध शस्त्र उठा लिए।

ययाच आनम्य किरीटकोटिभिः पादौ स्पृशन्नच्युतमर्थसाधनम् ।

सिद्धार्थ एतेन विगृह्यते महानहो सुराणां च तमो धिगाढ्यताम् ॥ ४१ ॥

*yayāca ānamya kirīṭa-koṭibhiḥ pādau sprśann acyutam artha-sāadhanam siddhārtha etena vigṛhyate mahān aho surāṇām ca tamo dhig āḍhyatām*

अर्थ: मुकुट की नोकों से अच्युत के चरणों का स्पर्श कर झुककर इन्द्र ने अपना प्रयोजन सिद्ध करने की याचना की थी; प्रयोजन सिद्ध होते ही वह महान् देव उन्हीं से लड़ बैठा। अहो, देवताओं का भी कैसा अज्ञान! धिक्कार है ऐश्वर्य को! (स्कन्ध 10, अध्याय 59, श्लोक 41)

युद्धों के नीचे छिपी इस अध्याय की शान्त शिक्षा यही है। प्रभु नरकासुर को मारते हैं, पर उसी घड़ी नरकासुर के पुत्र को शरण देते हैं; वे देवताओं को वह सब लौटा देते हैं जो असुर ने छीना था, पर वही देवता सुख पाते ही देने वाले हाथ को भूल जाते हैं। जिस पृथ्वी देवी ने अभी-अभी पुत्र खोया है, वे झुककर शरण लेती हैं; जिस इन्द्र ने अभी-अभी अपना सम्मान पाया है, वह झपटता और लड़ता है। अन्तर भाग्य का नहीं, हृदय का है। दाता के स्मरण के बिना भोगा गया ऐश्वर्य स्वर्ग में भी अन्धकार जन्माता है, जबकि हानि की घड़ी में की गई शरणागति प्रभु के रक्षक हाथ को नीचे खींच लाती है।

## सोलह हज़ार घरों में एक प्रभु

द्वारका लौटकर अविनाशी प्रभु ने जितनी वधुएँ थीं उतने ही रूप धारण किए और एक ही शुभ मुहूर्त में हर एक से उसके अपने भवन में विधिपूर्वक विवाह किया।

अथो मुहूर्त एकस्मिन् नानागारेषु ताः स्त्रियः ।

यथोपयेमे भगवान् तावद्रूपधरोऽव्ययः ॥ ४२ ॥

*atho muhūrta ekasmin nānāgāreṣu tāḥ striyaḥ yathopayeme bhagavān tāvad-rūpa-dharo 'vyayaḥ*

अर्थ: तब एक ही मुहूर्त में अव्यय भगवान ने उन स्त्रियों की संख्या के बराबर रूप धारण कर उनके पृथक्-पृथक् भवनों में उनसे यथाविधि पाणिग्रहण किया। (स्कन्ध 10, अध्याय 59, श्लोक 42)

उन अनुपम महलों में सदा उपस्थित रहते हुए, तर्क से परे कर्म करने वाले और अपने ही आनन्द में परिपूर्ण श्रीकृष्ण लक्ष्मी के उन अंशरूपों के साथ साधारण गृहस्थ की तरह रहे और गृहस्थ के कर्तव्य निष्ठा से निभाते रहे। जिनके मार्ग को ब्रह्मा भी नहीं जान पाते, उन रमापति को पति पाकर वे स्त्रियाँ बढ़ते प्रेम से उनकी सेवा करती रहीं, स्नेहभरी मुस्कान, कटाक्ष, मधुर वार्ता और लज्जा से उनका स्वागत करती हुई। सैकड़ों दासियों के रहते भी वे स्वयं उठकर उनकी अगवानी करतीं, चरण धोतीं, ताम्बूल देतीं, पंखा झलतीं, चन्दन लगातीं, केश सँवारतीं और भोजन परोसतीं।

## इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. कोई दुर्ग प्रभु को नहीं रोक सकता। पर्वत, शस्त्र, जल, अग्नि, वायु और दस हजार फन्दे श्रीकृष्ण को एक क्षण भी न रोक सके। हृदय के चारों ओर अभिमान या भय जो भी दीवारें खड़ी करे, उनकी कृपा उन्हें भेद देती है।
2. प्रभु की विजय सहज और करुणामय है। मुर के सिर खेल में गिरते हैं; नरकासुर अपना शूल छोड़ने से पहले ही समाप्त हो जाता है। वे केवल अत्याचार मिटाने के लिए संहार करते हैं, और ऋषि “साधु!” कह उठते हैं।
3. शरणागति हानि को आश्रय में बदल देती है। पृथ्वी स्वीकार करती हैं कि सब कुछ, वे स्वयं भी, एक प्रभु में आभास मात्र है, और अपने पौत्र के लिए रक्षा माँगती हैं; अभय तुरन्त मिल जाता है।
4. स्मरण-रहित ऐश्वर्य कृतघ्नता जन्माता है। इन्द्र ने प्रभु के चरणों में याचना की और फिर एक वृक्ष के लिए उनसे लड़ पड़ा। कृपा से मिला सुख कृतज्ञता के बिना अभिमान बन जाता है।
5. जो प्रभु को चुनता है, प्रभु उसे स्वीकार करते हैं। बन्दिनी कन्याओं के पास हृदय की एक कामना के सिवा देने को कुछ न था, और उसी कामना ने लक्ष्मीपति को उनका पति बना दिया।

## एक भक्तिमय चिन्तन

यह अध्याय शस्त्रों की झंकार से महल की मौन सेवा तक जाता है, और इसके दोनों छोर एक-दूसरे से जुड़े हैं: जो प्रभु असुर का दुर्ग तोड़ते हैं, वही शान्त बैठे रहते हैं जब एक रानी उनके चरण धोती है — दोनों में वे प्रेम का उत्तर दे रहे हैं और भय मिटा रहे हैं। जो बात मन में रह जाती है, वह उनके चरणों में झुके दो चेहरों का भेद है: पृथ्वी माता, जो पुत्र की मृत्यु के दिन झुकती हैं, और इन्द्र, जो केवल इच्छा पूरी होने तक झुकता

है। किसी दिन हानि हमें झुका देती है और हम पाते हैं कि हमारे प्रिय के सिर पर उनका हाथ पहले से रखा है। किसी दिन प्रार्थनाएँ पूरी हो जाती हैं और हम इन्द्र की तरह जल्दी उठकर तुच्छ बातों पर झगड़ने लगते हैं। राजकुमारियाँ तीसरा मार्ग दिखाती हैं: न सौदा, न विस्मृति; वे केवल उन्हें चाहती थीं, और वे हर एक के पास ऐसे आए मानो वही अकेली हो। हमारी भक्ति भी यह अविभक्त चाह सीख ले।

## एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज अपनी कोई एक ऐसी प्रार्थना याद कीजिए जो पहले ही पूरी हो चुकी है, चाहे कितनी छोटी हो, और प्रभु से कुछ और माँगने से पहले हाथ जोड़कर उसके लिए धन्यवाद दीजिए। फिर यह स्मरण करते हुए कि पृथ्वी देवी ने भगदत्त को श्रीकृष्ण के चरणों में रख दिया था, किसी एक व्यक्ति का नाम लीजिए जिसकी आपको चिन्ता है, और उसे मन-ही-मन वहीं रख दीजिए, यह माँगते हुए कि उनका करकमल उसके सिर पर रहे। आरम्भ में धीरे-धीरे जपें: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

## उपसंहार

उनसठवाँ अध्याय हज़ारों रानियों के विषय में परीक्षित के प्रश्न का उत्तर एक युद्ध के भीतर छिपी करुणा दिखाकर देता है। श्रीकृष्ण अभेद्य नगरी पर धावा बोलते हैं, मुर और नरकासुर को गिराते हैं, फिर एक शोकाकुल माता की सुनते हैं, उसके पौत्र की रक्षा करते हैं, स्वर्ग की निधियाँ लौटाते हैं, सत्यभामा के लिए पारिजात लाते हैं, और हर उस कन्या से विवाह करते हैं जिसने उन्हें चुना। हम साथ-साथ रखी दो मुद्राओं — पृथ्वी की शरणागति और इन्द्र की विस्मृति — को हृदय में रखें, और मुक्त राजकुमारियों के साथ वह अविभक्त लालसा चुनें जो प्रभु को हमारा अपना बना देती है।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

## संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), अध्याय 59।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़्डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

## जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: [kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-59-the-killing-of-the-demon-naraka-hi.html](http://kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-59-the-killing-of-the-demon-naraka-hi.html)

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

